# कालिदास की कृतियों में चातुर्वर्ण्य का कर्तव्य और उनकी सामाजिक स्थिति ।

**बालधा नयना जी**
**सौराष्ट्र यूनिवर्सिटी**
Email: baldhanayna24@gmail.com

'वर्ण'शब्द का अर्थ किसी विशेष वर्ग या समुदाय होता है । यास्कने इसका अर्थ वर्णो वृणोते ।[1] अर्थात किसी वस्तु का वरण करना । वर्ण शब्द की व्युत्पत्ति वर्ण + धञ धातुक्षसे हुई है ।[2] जिसका अर्थ मानव समाज का चार विभाग यानि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र । वर्तमान में वर्ण का अर्थ जाति के रूप में प्रयोग किया जाता है। जो वैदिक वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप है । वर्णन शब्दों का अर्थ कालांतर में केवल समुदाय के अर्थ में रूढ कर लिया । भारतीय समाज प्राचीन काल से चार वर्णों में भी विभक्त हैं। इस चारों वर्णों की उत्पत्ति के विषय में ऋग्वेद में कहां है -

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् साहू राजन्य: कृत: ।
ऊरू तदस्य यद्वैशय: पदभ्यां शुद्रोऽजायत्।।[3]

अर्थात् उस विराट पुरुष के मुख से ब्राह्मण, क्षत्रिय भुजाओं में से, वैश्य ऊरू भाग से तथा शुद्र पैरों में से उत्पन्न हुए हैं। कालांतर में शुद्रो को समाज हीन दृष्टि से देखने लगा । उनकी दशा दिन प्रतिदिन दयनीय प्रति गई हो गई । किंतु वैदिक वर्ण व्यवस्था इसके विरुद्ध है ,क्योंकि वेदों में विराट पुरुष में से चारों वर्णों की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है। इस संबंध में भगवद्गीता में कहा है कि चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्मविभागश: ।[4] रघुवंश में चारों वर्णों की उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से हुई थी ऐसा उल्लेख मिलता है । चतुर्वर्णमयो लोकस्त्व सर्व : चतुर्मुखात्।(रघु.-10/22) वैदिक वर्ण व्यवस्था सुंदर थी । उसमें किसी को निम्न बताने का उद्देश्य नहीं था बल्कि यह विभाजन समाज में सुचारू व्यवस्था एवं वर्गों का कार्य अनुसार कर्म के लिए किया गया था । उसमें किसी भी स्थान पर छुआछूत और ऊंच-नीच का भेदभाव का उल्लेख नहीं किया गया है । इस प्रकार परस्पर प्रेम पूर्वक रहते हुए तथा एक साथ मिलकर

समाज की प्रगति की मंगल की कामना संज्ञान सूक्त में की गई है।[5] इशोपनिषद में सभी वर्गों को कार्य अनुसार कर्म करना परम धर्म कहा है। जैसे- कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समा। :

----चातुर्वर्ण्य का कर्तव्य -

वैदिक समय में वर्ण व्यवस्था सुचारू रूप से चल रही थी किंतु लगता है कि कालिदास के समय शिथिल हो गई थी, फिर भी चारों वर्णों के व्यक्ति अपने कर्तव्य का निष्ठा पूर्वक कार्य करते थे । ब्राह्मणों का मुख्य कार्य अध्ययन अध्यापन का था । सभी वर्गों की रक्षा करना क्षत्रिय का धर्म था।[6] वैश्यो का कार्य सामाजिक व्यवस्था में आर्थिक योगदान देना तथा शुद्रो को सभी वर्गों की सेवा का कार्य दिया गया था।

1. **ब्राह्मण** -

प्राचीन काल से ब्राह्मणों को देवता रूप माना गया है ।[7] आचार्य मनु नें ब्राह्मणों का अध्ययन, अध्यापन,, दान देना और लेना यह उनका मुख्य कार्य का उल्लेख किया है । कोई भी शिष्य के पास गुरु दक्षिणा न हो, फिर भी उसे शिक्षा देना भी उनका कर्तव्य बताया है ।[8] रघुवंश में उन्हें सदैव स्वाध्याय करने की सलाह दी गई है । कालिदास के सभी कृतियों में ब्राह्मण को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है । उस समय राजा भी ब्राह्मणों को वंदन करते थे । दिलीप राजा ने महर्षि वशिष्ठ को अपने कार्यों का अधिष्ठाता और दैवी एवं मानुषी आपत्तियों का निवारक कहां है ।[9] यज्ञ एवं दान आदि को ब्राह्मणों का प्रधान कर्तव्य कहां है ।[10] कालिदास अनुसार ब्राह्मण अपना कर्तव्य प्राचीन परंपरा अनुसार ही करते थे , जिसका प्रमाण वशिष्ठ का आश्रम, कण्व का तपोवन , विश्वामित्र के आश्रम में प्राप्त होते हैं । कई ब्राह्मण आश्रम त्याग कर राजमहलों में रहते थे और वे वेतन लेकर शिक्षा प्रदान करते थे ।[11] उस समय कई ब्राह्मणों ने वणिक का कार्य भी आरंभ किया था ।[12]

2. **क्षत्रिय-**

प्राचीन काल से समाज में दूसरा उच्च स्थान क्षत्रियों को दिया है । कालिदास ने अपने कृतियों में नाश या विनाश से बचाए उसे क्षत्रिय कहां है । क्षतात् किल त्रायत् ।[13] क्षत्रिय क की व्याख्या करते हुए कहा है - राजा प्रकृतिरंजनात् । अभिज्ञानशाकुंतल में कहा है कि राजा को शस्त्र सिर्फ प्रजारक्षण के लिए ही उठाना चाहिए ।[14] राजा अपनी प्रजा का रक्षण एवं पालन पोषण अपनी संतान की भांति करते थे ।[15] प्रजा के साथ आश्रम में ऋषियों की रक्षा एवं पोषण करना उनका कर्तव्य था । कौत्स वरतन्तु को गुरु दक्षिणा देने के लिए रघुराजा से धन की याचना करते हैं ।[16] क्षत्रिय न्याय प्रिय होना चाहिए । वह अनुचित कार्य करने पर प्रिय

व्यक्ति को भी दंड देते थे।[17] क्षत्रिय व्यक्ति शस्त्र एवं शास्त्र में निपुण होते थे, फिर भी धनुर्विद्या उनकी मुख्य शिक्षा थी। वे किसी को वंदन करते समय स्वयं से धनुष्य कभी अलग नहीं करते थे । जैसे- चापगर्भमंजलि बद्धवा प्रणमति । ( विक्रमोर्वशीयम्-अंक-५)

**3. वैश्य-**

आचार्य मनु नें वैश्यो के कर्तव्य स्पष्ट करते हुए कहा है कि -

पशूनां रक्षण दानमिज्याध्यायनमेव च ।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च ।।(मनुस्मृति-1/90)

महर्षि याज्ञवल्क्य ब्याज, कृषिव्यापार ,,पशुपालन कर्तव्य का उल्लेख किया है।[19] कालिदास के काव्य में वैश्यों के कार्य में कोई परिवर्तन नहीं आया था । कालिदास ने मेघदूत एवं रघुवंश में कहा है कि वैश्य द्वारा अधिक मेहनत से खेती की जाती थी । बारिश खेती का प्रमुख आधार थी ।[20] कुमारसंभव में तो कहा हैं कि पार्वती जैसे शिव से मिलने की प्रतीक्षा करती है, उनकी तरह वह वर्षा की प्रतीक्षा करते हैं।[21] रघुवंश में वैश्य द्वारा धान,ईख और केसर की खेती का वर्णन मिलता है तथा उस समय लोग चंदन भी उगाते थे ।[22]

**4. शुद्र -**

वेदकाल से प्रमुख चार वर्णों में शूद्र का उल्लेख मिलता है । वेदों में विराट पुरुष के पैरों में से उत्पत्ति बताई गई है । मनुष्य के पूरे शरीर का भार उसका पैर वहन करता है वैसे ही वें संपूर्ण समाज का सेवा कार्य करते थे । आचार्य मनु ने उसका प्रधान कर्तव्य बताया है। इससे ही वह परम सुख की प्राप्ति करता है। जैसे- तेषां शुश्रुषाणाश्चैव महत् सुखमवाप्नुयात्।[23] रधुवंश में कहां है कि शुद्र द्वारा तपश्चर्या के कारण ब्राहमण पुत्र की अकाल मृत्यु हो जाती है ।[24] कालिदास के समय में किसी भी वर्ण द्वारा कार्य का अतिक्रमण करने पर राजा उसे दंडित करते थे । जैसे राम ने अनपेक्षित कार्य करने पर शम्बुक को दंड दिया था ।[25] इसका यह अर्थ नहीं है कि शुद्र लोग अछूत थे । इस संबंध में ऋग्वेद में भी कहा है कि मनुष्य तुम्हारे पानी पीने का स्थान एवं तुम्हारा खान-पान एक साथ हो ।जैसे प्रपा सहवोऽन्नभाग:समाने योक्त्रे सहवोयुनज्मि ।(अथर्ववेद-3/30/6) कालिदास ने अपनी कृतियों में कहां हैं कि सभी वर्ण समान रूप से स्वकर्तव्य का निर्वाह करते थे और रेखामात्र भी उनका अनादर नहीं करते थे ।[26]

----- चातुर्वर्ण्य की सामाजिक स्थिति

कालिदास की कृतियों से लगता है कि उस समय वेदकाल अनुसार सभी वर्णों स्वकार्य करते थे और अपने कर्म के प्रति वफादार थे । उस समय समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोच्च था ।अतः कुलगुरु,तपस्वी, ऋषि आद पर लोगों की अतूट श्रद्धा थी । उनके घर आने पर लोग उनका अच्छी तरह आतिथ्य सत्कार करते थे ।[27] उनको राजा गांव भी दान करते थे ।[28] कालिदास की कृतियों में यज्ञोपवीत तथा अध्ययन के अतिरिक्त नाट्यकला का प्रशिक्षण एवं विवाह आदि उनका कार्य बताया है ।[29] ब्राह्मण जन्मादि सोलह संस्कार भी करवाते थे ।[30] जैसे कि वर्तमान में धार्मिक कार्य उनके द्वारा ही संपन्न होता है ।

कालिदास के समय में राजा एवं क्षत्रिय का बड़ा ही महत्व दृष्टिगत होता है । उसे ब्राह्मणों की तरह जातकर्म संस्कारों के कारण उसे द्विज कहां है । [31] कालिदास की सभी कृतियों में क्षत्रिय के जातकर्मादि संस्कार का उल्लेख मिलता है । रघुवंश में परशुराम ब्राह्मण एवं क्षत्रिय थे । जैसे -पित्र्यमशंमुपवीतलक्षण मातृकं च धनुरुजितं दधत्।(रधुवंश-11/64)

कालिदास के समय वैश्यों की स्थिति थोड़ी सी निम्न थी । जैसे कि कोई वैश्य की नि:संतान मृत्यु होने पर उनकी धन संपत्ति आदि राज खजाने में मिला देने का वर्णन मिलता है ।[32] विक्रमोर्वशीय अनुसारउस समय समाज में ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों के समान वैश्यो के भी जातकर्म आदि संस्कार किए जाते थे ।

वैदिक काल में शूद्रों की स्थिति अधिक निम्न थी । आचार्य मनु ने सभी कार्य वैदिक मंत्रों के बिना करने का उल्लेख किया है किंतु कालिदास के समय में शूद्र की स्थिति इतनी कठोर नहीं थी । उस समय शूद्रों का अन्य वर्णों में विवाह आदि होते थे । इसका प्रमाण रघुवंश में मिलता है । जैसे कि दशरथ के बाण लगने पर श्रवण स्वयं को वैश्य पिता एवं शुद्र माता की संतान बताते हुए खुद को कर्ण संज्ञक मुनि कहता है ।[33] अनुलोम प्रतिलोम विवाह के कारण निश्चित वर्ण नहीं रहा था। रघुवंश में जाति का वर्णन करते हुए कहा है कि -

स्तूयमानक्षणे तस्मिन्नलक्ष्यत स वन्दिभि ::।
प्रवृद्ध इव पर्जन्य सारङ्गेरभिनन्दित: ।। (रधु.-17/15)

कालिदास के मतानुसार व्यक्ति को अपने जाति एवं वर्ण अनुसार कार्य करना चाहिए वह कार्य निंदनीय ही क्यों न हो । इस विषय में अभिज्ञानशाकुंतल में कहा है कि सहजं किल यद् विनिन्दितं न खलु तत्कर्म विवर्जनीयम् । पशुमारणकर्मदारुणोऽनुम्पामृदुरेव श्रोत्रिय ।(अभि.-6/1)

उपसंहार

वेदों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कर्म प्रधानता स्वरूप ब्राह्मण भी शुद्र एवं शुद्र ब्राह्मण होते थे । मनुस्मृति में भी लिखा है कि जन्मना जायते शुद्र संस्कारात् द्रवित उच्चते । अर्थात् मनुष्य जन्म से शुद्र रूप होता है किंतु संस्कार पश्चात् द्विज होता है । समाज को गतिशील रखने सभी वर्णों की आवश्यकता है । प्राचीन काल से काल में वर्णों का जन्म के साथ कोई संबंध नहीं था । कालांतर में इस जाति वर्ण व्यवस्था ने समाज में व्यवस्था एवं ईर्ष्या का विष फैला दिया है । उस समय मनुष्य की योग्यता उनके कर्म पर आधारित थी । हर एक व्यक्ति को अपनी सामर्थ्य अनुसार श्रम चुनने की स्वतंत्रता थी । अतः यह तय है कि कवि कालिदास के समय तक समाज में सभी कार्य सुचारू रूप से होते थे । चारों वर्णों एक दूसरे के साथ प्रेम एवं आदर से रहते थे । उनकी किसी भी कृति में वर्णों के बीच लड़ाई -कलह आदि दृश्य दृष्टिगत नहीं होते है । सभी वर्ण एक साथ शांतिपूर्ण जीवन निर्वाह करते थे । कालिदास के कृतियों में वर्ण व्यवस्था का स्थान वंशागत अधिकार ने ले लिया था । जो वर्तमान में जातिवाद का उग्र रूप धारण कर समाज की एकता को निगल रहा है। भारतीय जनमानस में कटुता एवं वैमनस्यता बढ़ती जा रही है और लोगों में सामाजिक टकराव बढ़ गया है । वेदों में और हमारे संस्कृत साहित्य में वर्ण व्यवस्था जन्म आधारित नहीं बल्कि कर्म आधारित दृष्टिगत होती है । अतः हमें वर्तमान में सबको वर्ण-जाति भेद भूलकर एक होकर अपने सामर्थ्य अनुसार कार्य करके अपने राष्ट्र के विकास में योगदान देना चाहिए ।

पादटीप:

1. निरुक्त, यास्क-2/1
2. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ-पृ-1021
3. ऋग्वेद-10/90/12
4. भगवद्गीता-4/13
5. सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
   देवा भागों तथा पूर्वे संजातानां उपासते ।। ऋग्वेद-10/191/2
6. अध्यापन अध्ययनं यजनं याजनं तथा।
   दानों प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकलल्पयत् ।। मनुस्मृति -1/88
7. एते वै देवा: प्रत्यक्ष यद्ब्राह्मण । तैत्तिरीय संहिता-1/7/3/1
8. समाप्तविद्येन मया महर्षिज्ञापितोभूद् गुरु दक्षिणा में । रघुवंश 5/20
9. उत्पन्नं धनु शिवन सप्तस्वंगेषु यस्य में ।
   दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदाम् ।। रघुवंश-1/6

10. रघुवंश-1/44
11. किं युवा वेतनदानेनैतेषाम् । मालविकाग्निमित्रम्-अंक-1
12. यस्यागम: केवलजीविकायै तो ज्ञानपण्यं वणिजं वदन्ति । मालविकाग्निमित्रम्-1/17
13. रघुवंश-2/53
14. तत्साधुकृत संधानं प्रतिसंहर सायकम्।
    आर्तत्राणाय व: शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि ।। अभिज्ञानशाकुंतल-1/11
15. से पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतव: । रघुवंश-1/24
16. रघुवंश-5/1
17. दृष्योऽपि संमतशिष्यस्तस्यार्त्तस्य यथौषधम्। :
    त्याज्यो दुष्करप्रियोऽप्यासीदङ्गुली वोरगक्षता ।। रघुवंश :-1/28
18. धन्विनौ तमृषिमन्वगच्छतां पौरदृष्टिकृतमार्गतोरणौ । रघुवंश-11/5
19. याज्ञवल्क्य स्मृति-1/119
20. कुमारसंभव-5/61
21. मेघदूत ,पूर्वमेघ-16
22. तस्य जातु मलयस्थलीरते धूतचन्दनलत: प्रियक्लमम्। कुमारसंभव-8/25
23. महाभारत शांतिपर्व-60/28
24. कृतदण्ड: स्वयं राज्ञा लेभेशुद्र: गतिम् ।
    तपस्या दुश्चरेणापि न स्वर्गाविलंधिना ।। रघुवंश-15/53
25. रघुवंश- 15/51
26. रेखामात्रमपि क्षुण्णादामनोर्वत्मन: परम ।
    न व्यतीयु: प्रजास्तस्य नियन्तुर्नेमिवृतय: ।। रघुवंश- 1/17
27. एहि विश्वामने वत्सेभिक्षासि परिकल्पता ।
    अर्थिनो मुनयः प्राप्तं गृहमेधिफलं ।। कुमारसंभव- 6/88
28. ग्रामेष्वात्मविसृष्टेषु यूपचिह्नेषु यज्वनाम् ।
    अमोघा: प्रतिगृहणन्तावर्ध्यानुपदमाशिष:।। रघुवंश-1/44
29. कुमारसंभव-6/29
30. रघुवंश-3/18
31. रघुवंश-5/23
32. राजगामी तस्यार्थसंचय इत्येतदमात्येन लिखितम् । विक्रमोर्वशीयम्- अंक-6
33. रघुवंश-9/76